om-11 INITIAL_Page 1 and 2 12-08-2014 11:59 Page 9

पुणे। महाराष्ट्र के गवर्नर के.शंकरनारायणन को रक्षासूत्र बांधते हुए ब्र.कु. रूपा। साथ हैं ब्र.कु. दीपक तथा ब्र.कु. गीतिका।

यू.के.-वेलिंगबर्ग। 'आर्ट ऑफ पॉज़ीटिव थिंकिंग' विषय पर आयोजित कार्यक्रम में सम्बोधित करते हुए ब्र.कु. भारत भूषण।

काकीनाड़ा। रंगाराया मेडिकल कॉलेज में आयोजित 'व्यसन मुक्ति शिविर' के अंतर्गत आ.प्र. के हेल्थ मिनिस्टर कामिनेनी श्रीनिवास को ईश्वरीय सौगात भेंट करते हुए ब्र.कु. रजनी व ब्र.कु. गंगा।

मोहाली। पंजाब टेक्निकल युनिवर्सिटी में 'फैकल्टी डेवलपमेंट प्रोग्राम' के अवसर पर ब्र.कु. प्रेमलता, ब्र.कु. सुमन तथा ब्र.कु. पलविन्दर को सम्मानित करने के पश्चात् समूह चित्र में डॉ. जी.डी. गुप्ता,कॉलेज ऑफ फार्मेसी तथा अन्य।

उस्मानाबाद। रोट्री क्लब तथा बार एसोसिएशन के नव निर्वाचित सदस्य रोट्री प्रेसीडेन्ट नितिन तावडे, सेक्रेट्री संजय गारजे, मराठावाड़ा ड्रग्गिस्ट एसोसिएशन के वाइस प्रेसीडेन्ट नारायण भंसाली, बार एसोसिएशन के प्रेसीडेन्ट रंगनाथ लोमटे का सम्मान करने के पश्चात् समूह चित्र में ब्र.कु. सुरेखा व ब्र.कु. वैजीनाथ।

पंढ़रपुर-महा.। 'आर्ट गैलरी' के शुभारंभ के दौरान दीप प्रज्वलन करते हुए ब्र.कु. संतोष,क्षेत्रीय संचालिका, ब्र.कु. मोहन सिंघल, ब्र.कु. सोमप्रभा, ब्र.कु. उज्जवला, सुधाकरपत,पूर्व अध्यक्ष,महाराष्ट्र परिवहन, ब्र.कु. गोदावरी, विनायकराव पाटील तथा अन्य।

अर्जुन के निराशावादी होने का कारण क्या?

गीता ज्ञान का आध्यात्मिक रहस्य

-राजयोग शिक्षिका ब्र.कु.उषा

पहले अध्याय में मानव की समस्याओं को दर्शाया गया है, जैसे अर्जुन का विषाद और मानव की समस्या दर्शायी हुई है। दूसरे अध्याय में मुख्य मुद्दे उठाये गए हैं और उनके समाधान दिए गए हैं। तीसरे अध्याय से लेकर सत्रहवें अध्याय तक इन समाधानों का विस्तार किया गया है और अठारहवें अध्याय में इनका सारांश दिया गया है। इस तरह ये श्रीमद्भगवद्गीता के अठारह अध्याय हम सबके सामने हैं। वास्तव में यह अर्जुन और भगवान के बीच का एक संवाद है। जैसे हम सभी ने देखा कि हम सभी कौन हैं? अर्जुन हैं। जो अर्जन करने का भाव लिये हुए है। यह हमारा और परमात्मा के साथ का संवाद है कि कैसे हमने इस संसार को अत्याधिक दूषित और जटिल बना दिया है। हम इसे रहने लायक एक बेहतर विश्व भी बना सकते हैं। बशर्ते कि हर व्यक्ति अपने लिए यह निश्चय कर ले कि वह कहाँ जाना चाहता है? अपने लक्षित बिन्दु तक कैसे पहुंचना चाहता है। इस तरह से पहले अध्याय में जो विषाद की स्थिति, कुरुक्षेत्र के मैदान, युद्ध के मैदान का दृश्य है , उसके दो मुख्य पात्र हैं भगवान और अर्जुन। इनके साक्षी हैं युद्ध में भाग लेने वाले अक्षौणी सैनिक। दोनों सेनाओं के योद्धा के नाम की घोषणा के पश्चात् अर्जुन का हृदय निराशा में डूब जाता है। सोचने की बात है कि अर्जुन जैसा एक महावीर जिसने अनेकों युद्ध अकेले ही कई बार जीते थे। ऐसा भी नहीं है कि वह भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य का पहली बार सामना करने जा रहा था, नहीं। अज्ञातवास में भी जब उनकी भनक दुर्योधन को लगी थी, उस समय वो पूरी सेना लेकर के युद्ध के लिए गये थे। तब अकेले अर्जुन ने भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य तथा अन्य महारथियों का सामना किया था। उस समय उसका हृदय विदीर्ण नहीं हुआ था, निराशा में नहीं डूबा था और आज महाभारत के समय ऐसी मनोदशा! क्यों इतना निराशा-वादी होने लगा? क्यों इतना निरुत्साही हो गया, क्या कहेंगे? क्या उसको अपनी शक्ति पर भरोसा नहीं रहा या उसको भगवान के साथ पर संदेह होने लगा? ये भी नहीं था कि उसे भगवान के साथ का संदेह था। ये भी नहीं कि उसे अपनी शक्ति पर भरोसा नहीं था, फिर भी ऐसी मनोदशा थी, जो उसके हाथ-पैर काँपने लगे, उसका गाण्डीव हाथ से छूटने लगा। वो बार-बार हाथ जोड़कर भगवान से विनती करने लगा कि मुझे ये युद्ध नहीं करना है उसका कारण क्या था? एक उदाहरण याद आता है कि किसी गाँव में एक पंच था। पंच के सामने कोई भी समस्या आती थी तो उसका फैसला पंच ही करता था। कोई कैसा भी गुनाह करके आया हो उसका फैसला भी पंच ही करता था। जिस गुनहगार को जो सजा देनी होती थी वो उसको देते थे, जिसको फांसी देनी होती थी उसे फांसी भी देते थे। लेकिन एक दिन ऐसा हुआ कि उस पंच के समक्ष उस पंच में से ही एक व्यक्ति का अपना बेटा गुनाह करके खड़ा हो गया। उसका गुनाह इस प्रकार का था कि उसको माफी की कोई गुंजाइश ही नहीं थी। उसको फांसी की ही सजा मिलने वाली थी। उस समय जिस पंच का वो बेटा था उन्होंने बाकी सभी के सामने हाथ जोड़कर माफी मांगना आरम्भ कर दिया या अपनी अर्जी रखनी आरम्भ कर दी। कहा कि आज की दुनिया में नौजवान अपने शक्ति के मद में आ करके, कभी-कभी रास्ता भटक जाते हैं। हमें उन्हें माफ कर देना चाहिए, जीवन में उन्हें अपनी गलती को सुधारने का अवसर देना चाहिए। यह उसका मोह बोल रहा था। वह मोह में आकर जब सबके सामने अर्जी डालता है और हाथ जोड़कर के हरेक से विनती करता है कि आप इन्हें ऐसी सजा न सुनाओ,जो हम अपना पुत्र खो बैठें।

- क्रमशः

एक अद्भुत व्यक्तित्व...

भारत के लोग श्रीकृष्ण जन्मोत्सव को बहुत ही धूमधाम से मनाते हैं। 'कृष्ण' नाम लेते ही उन्हें अपने सामने, हाथों में अथवा होठों पर मुरली धारण किये हुए मोर-मुकुटधारी, सांवरे रंग की एक दिव्य मूर्ति की झलक दिखाई देती है। वे 'कृष्ण' शब्द का अर्थ ही 'श्यामला' अथवा 'सांवरिया' मानते हैं और मुरली तो वे कृष्ण के हाथों में शैशव अवस्था से ही, जबकि वह अभी घुटनों के बल चलता होगा, तब से ही दिखाते हैं और इसी अर्थ में ही उसे 'मुरलीधर' भी मानते हैं।

भादो मास के कृष्ण पक्ष में जो अष्टमी आती है, उस दिन लोग श्रीकृष्ण का जन्म हुआ मानते हैं, परंतु श्रीमद्भगवद् से संकेत मिलता है कि श्रीकृष्ण के जन्म लेने पर, अथवा थोड़ा पहले, अन्य मुख्य आठ देवताओं ने भी जन्म लिया था। अतः वास्तव में जन्माष्टमी केवल श्रीकृष्ण के जन्म का उत्सव नहीं बल्कि साथ ही आठ मुख्य देवताओं के भी जन्म का उत्सव है। श्रीकृष्ण जैसे देवता के बहन-भाई आदि संबंधी भी तो देवी-देवता ही चाहिए। देवताओं के बारे में तो प्रसिद्ध है कि वे अपने पुण्य-कर्मों की प्रारब्ध भोगते हैं।

तो स्पष्ट है कि जब उन देवताओं ने और श्रीकृष्ण ने जन्म लिया होगा तब वे अपनी प्रारब्ध भी तो साथ लाये होंगे। आज भी जब कोई बच्चा जन्म लेता है तो लोग कहते हैं कि यह अपनी तकदीर साथ ले आया है। तो क्या श्रीकृष्ण और जिन आठ देवी-देवताओं ने जन्म लिया, तो वे अपने दैवी भाग्य को साथ नहीं लाये होंगे? अवश्य ही लाये होंगे। तो स्पष्ट है कि उनका जन्म द्वापर युग में नहीं बल्कि सतयुग में हुआ होगा क्योंकि देवी-देवताओं की प्रारब्ध के योग्य तो सतयुगी सृष्टि के सतोप्रधान पदार्थ तथा सतोप्रधान एवं धर्मनिष्ठ जन ही होते हैं।

श्रीकृष्ण के सभी भक्त, श्रीकृष्ण को 'वैकुण्ठनाथ' की उपाधि से याद करते हैं और देखा जाये तो यह उपाधि भी उपरोक्त रहस्य की पुष्टि करती है क्योंकि वास्तव में सतयुगी पावन एवं सम्पूर्ण सुखी सृष्टि ही देव-सृष्टि अथवा स्वर्ग एवं वैकुण्ठ है। स्वर्ग या वैकुण्ठ इस मनुष्य लोक से ऊपर कहीं नहीं है बल्कि यह सतयुगी एवं त्रेतायुगी सृष्टि का नाम है जोकि द्वापर युगी और कलियुगी सृष्टि की भेंट में पवित्रता, सतोगुण, दिव्यगुण-सम्पन्नता तथा सुख-शांति के दृष्टिकोण से उच्च है। अतः वैकुण्ठनाथ का वास्तविक अर्थ है 'सतयुगी सुखमय सृष्टि का चक्रवर्ती राजा'। इस प्रकार, श्रीकृष्ण की इस उपाधि से भी संकेत मिलता है कि श्रीकृष्ण सतयुग के आरंभ में हुए।

प्रायः लोग श्रीकृष्ण को एक राजनीतिक नेता, एक अजेय योद्धा, एक उच्च धार्मिक योगारूढ़ महापुरुष, एक कुशल राजदूत, एक प्रतिभाशाली रथवाहक, एक मनमोहक बालक, एक सहायक मित्र, एक निपुण मुरलीवादक के रूप में याद करते हैं। वे मुख्यतः इन्हीं रूपों में इनका गायन करते हैं। परंतु प्राचीन अथवा अर्वाचीन ग्रंथों में इन पहलुओं में श्रीकृष्ण की महानता को स्पष्ट करने के लिए जिन वृत्तांतों का उल्लेख है वे प्रायः उसकी महानता के साधक नहीं बल्कि बाधक हैं। उदाहरण के तौर पर श्रीकृष्ण के बाल्यावस्था में मक्खन चुराने संबंधी जिन वृत्तांतों का उल्लेख है, वे उन्हें 'मोहन' या 'मनमोहन' चित्रित करने के साथ-साथ उनमें चंचलता, अनुशासनहीनता, इन्द्रिय-निग्रह का अभाव, चोरी का अस्तित्व भी प्रदर्शित करते हैं। द्वापर और कलियुग के मनभावने और लुभावने बच्चों का यह प्राकृत स्वभाव होता है-इसलिए उस काल में कवियों ने अपनी कृतियों में श्रीकृष्ण के भी ऐसे ही स्वभाव को उभारा है। वे सोंचते होंगे कि वह बच्चा ही क्या जो नटखट, हठी और चंचल न हो। लगता है कि वे भूल गए होंगे कि श्रीकृष्ण अपने हर आयु-भाग में विलक्षण थे।

वे मनमोहक इसलिए थे कि नैन उनके रूप को देखकर सुख पाते थे, जैसे सारा सौन्दर्य उनके रूप-लावण्य में मुग्ध हो गया हो, ऐसी उनकी न्यारी छवि थी। इसलिए उनका नाम ही हो गया 'सुन्दर'। निस्संदेह उनमें बाल्यकाल की सरलता रही होगी, खेल-कूद भी उनको प्रिय होगा, वे लुकने-छिपने का खेल भी खेलते होंगे, आँख मिचौनी भी करते होंगे, उनकी हँसी, उनका हाव-भाव और उनका हर क्रियाकलाप मनमोहक रहा होगा परंतु उनमें दिव्यता अवश्य रही होगी और जिन नियमों का योगी अभ्यास करते हैं, वे उन्हें जन्म से ही मिले होंगे।